**ओ३म्**

**‘पाप दूर करने का वैदिक साधन अघमर्षण के तीन मन्त्र व उनके अर्थ’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 मनुष्य जाग्रत अवस्था में कोई न कोई कर्म अवश्य करता है। यह कर्म दो प्रकार के होते हैं जिन्हें शुभ व अशुभ अथवा पुण्य व पाप कह सकते हैं। मनुष्य का जन्म ही पूर्वजन्मों के शुभ व अशुभ कर्मों के फलों के भोग के लिए हुआ है। शुभ व सत् कर्मों का फल सुख व विपरीत कर्मों का फल दुःख होता है। संसार में मनुष्य अन्य प्राणियों से इस अर्थ में भिन्न है कि उसके पास निश्चयात्मक बुद्धि होती है जिससे निर्णय करके वह किसी कर्म को करता है। मनुष्येतर अन्य प्राणियों में बुद्धि होती तो है परन्तु वह अपने स्वभाविक ज्ञान के अनुसार ही कार्य करती है। वह सत्य व असत्य का निर्णय नहीं कर सकती। यदि वह विचार व चिन्तन कर सकते तो सम्भव था कि वह मनुष्य की तुलना में अधिक अच्छे व श्रेष्ठ कर्म करते। वर्तमान में भी गाय, बैल, घोड़ा, भैंस, भेड़, बकरी आदि पशु मनुष्यों से कहीं अधिक मनुष्यों का उपकार करते हुए दिखते हैं। मनुष्य तो इन पशुओं का उपयोग व दुरुपयोग ही करता है। मनुष्य योनी उभय-योनी है। इसमें मनुष्य पूर्व व वर्तमान जन्मों के कर्म भोगने के साथ नये शुभ-अशुभ कर्म भी करता है। अशुभ कर्मों का परिणाम दुःख होता है जिससे मनुष्य बच सकता है यदि दुःखों का कारण अशुभ कर्मो वा पाप को हटा दे अर्थात् अशुभ कर्म न करे। अतः मनुष्य को शुभ व अशुभ कर्मों का ज्ञान होना चाहिये और भविष्य में दुःखों से बचने के लिए उसे केवल शुभ कर्म ही करने चाहिये। बुरे कर्मों को विवेक पूर्वक रोक देना चाहिये। इन पाप कर्मों से बचने के लिए महर्षि दयानन्द ने अपनी **‘वैदिक सन्ध्या पद्धति’** में **‘अघमर्षण मन्त्र’** को लिखकर कर व इनकी व्याख्या करके शुभ व अशुभ कर्मों के परिणाम व फलों को जानकर पाप कर्मों के त्याग करने का विधान किया है जिससे हमारा भविष्य सुरक्षित व सुखी हो।

 जिन अघमर्षण मन्त्रों की चर्चा हमने की है वह वैदिक सन्ध्या पद्धति का एक भाग है। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के सम्यक् ध्यान के लिए की जाने वाली वैदिक सन्ध्या में गायत्री मन्त्र से शिखा बन्धन, आचमन मन्त्र, इन्द्रियस्पर्शमन्त्र, मार्जनमन्त्र, प्राणायाममन्त्र, अघमर्षणमन्त्र, मनसापरिक्रमामन्त्र, उपस्थानमन्त्र, समर्पणमन्त्र और समाप्ती पर नमस्कारमन्त्र के मन्त्रों का पाठ करने का विधान किया है। महर्षि दयानन्द के यह विधान बहुत ही युक्तिसंगत हैं और साधक व उपासक को सन्ध्या के फल प्राप्त कराने में पूर्णतः समर्थ हैं। सन्ध्या करने का प्रयोजन है कि ईश्वर से हमें मनोवांछित आनन्द अर्थात ऐहिक सुख-समृद्धि, हम पर सर्वदा सुखों की वर्षा और पूर्णानन्द की प्राप्ति वा मोक्ष के आनन्द की प्राप्ति हो। इन लाभों के अतिरिक्त सन्ध्या में शरीर की रक्षा व इसको स्वस्थ रखने आदि की अनेक प्रार्थनायें निहित हैं। अघमर्षण के सन्ध्या में सम्मिलित तीन मन्त्र हैं-**‘ओ३म्। ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रोऽअर्णवः।।1।। समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽअजायत। अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।।2।। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।।3।।’** अपने जीवन से पापों को दूर करने के लिए इन मन्त्रों का पाठ करने के बाद इनके यथार्थ अर्थों पर विचार करना व उससे मिलने वाली शिक्षा का पालन करना आवश्यक है। पहले मन्त्र का अर्थ है कि सब जगत का धारण और पोषण करनेवाला और सबको वश में करनेवाला परमेश्वर, जैसा कि उसके सर्वज्ञ विज्ञान में जगत् के रचने का ज्ञान था और जिस प्रकार पूर्वकल्प की सृष्टि में जगत् की रचना थी और जैसे जीवों के पुण्य-पाप थे, उनके अनुसार ईश्वर ने मनुष्यादि प्राणियों के देह बनाये हैं। जैसे पूर्व कल्प में सूर्य-चन्द्रलोक रचे थे, वैसे ही इस कल्प में भी रचे हैं जैसा पूर्व सृष्टि में सूर्यादि लोकों का प्रकाश रचा था, वैसा ही इस कल्प में रचा है तथा जैसी भूमि प्रत्यक्ष दीखती है, जैसा पृथिवी और सूर्यलोक के बीच में पोलापन है, जितने आकाश के बीच में लोक हैं, उनको ईश्वर ने रचा है। जैसे अनादिकाल से लोक-लोकान्तर को जगदीश्वर बनाया करता है, वैसे ही अब भी बनाये हैं और आगे भी बनावेगा, क्योंकि ईश्वर का ज्ञान विपरीत कभी नहीं होता, किन्तु पूर्ण और अनन्त होने से सर्वदा एकरस ही रहता है, उसमें वृद्धि, क्षय और उलटापन कभी नहीं होता। इसी कारण से **‘यथापूर्वम-कल्पयत्’** इस पद का ग्रहण किया है। इस मन्त्र व मन्त्रार्थ में सृष्टि रचना, उसका प्रयोजन, जीवों के पूर्व कर्मों के अनुसार मनुष्यादि देह बनाने पर प्रकाश डाला है। इससे यह भी ज्ञात होता है कि इस सृष्टि का स्वामी ईश्वर है और जीवों के कर्मों के फल, दण्ड-दुःख व सुख, देने के लिए उसने मनुष्यादि प्राणियों के देह बनाये है।

 अघमर्षण के दूसरे मन्त्र का अर्थ है कि उसी ईश्वर ने सहजस्वभाव से जगत् के रात्रि, दिवस, घटिका, पल और क्षण आदि को जैसे पूर्व थे वैसे ही रचे हैं। इसमें कोई ऐसी शंका करे कि ईश्वर ने किस वस्तु से जगत् को रचा है? उसका उत्तर यह है कि ईश्वर ने अपने अनन्त सामर्थ्य से सब जगत् को रचा है। ईश्वर के प्रकाश से जगत् का कारण प्रकाशित होता और सब जगत के बनाने की सामग्री ईश्वर के अधीन है। उसी अनन्त ज्ञानमय सामर्थ्य से सब विद्या के खजाने वेदशास्त्र को प्रकाशित किया है जैसाकि पूर्व सृष्टि में प्रकाशित था और आगे के कल्पों में भी इसी प्रकार से वेदों का प्रकाश करेगा। जो त्रिगुणात्मक अर्थात् सत्व, रज और तमोगुण से युक्त है, जो स्थूल और सूक्ष्म जगत् का कारण है, सो भी कार्यरूप होके पूर्वकल्प के समान उत्पन्न हुआ है। उसी ईश्वर के सामर्थ्य से जो प्रलय के पीछे एक हजार चुतुर्युगी के प्रमाण से रात्रि कहाती है, सो भी पूर्व प्रलय के तुल्य ही होती है। इसमें ऋग्वेद का प्रमाण है कि--**‘‘जब जब विद्यमान सृष्टि होती है, उसके पूर्व सब आकाश अन्धकाररूप रहता है, उसी का नाम महारात्रि है।”** तदनन्तर उसी सामर्थ्य से पृथिवी और मेघ मण्डल=अन्तरिक्ष में जो महासमुद्र है, सो पूर्व सृष्टि के सदृश ही उत्पन्न हुआ है। तीसरे मन्त्र में ईश्वर ने मनुष्यों को शिक्षा देते हुए कहा है कि उसी समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् संवत्सर, अर्थात् क्षण, मुहुर्त, प्रहर आदि काल भी पूर्व सृष्टि के समान उत्पन्न हुआ है। वेद से लेके पृथिवीपर्यन्त जो यह जगत् है, सो सब ईश्वर के नित्य सामथ्र्य से ही प्रकाशित हुआ है और ईश्वर सबको उत्पन्न करके, सबमें व्यापक होके अन्तर्यामिरूप से सबके पाप-पुण्यों को देखता हुआ, पक्षपात छोड़के सत्यन्याय से सबको यथावत् फल दे रहा है।

 इन अर्थों को प्रस्तुत कर महर्षि दयानन्द कहते हैं कि कि ऐसा निश्चित जान के ईश्वर से भय करके सब मनुष्यों को उचित है कि मन, वचन और कर्म से पापकर्मों को कभी न करें। इसी का नाम अघमर्षण है अर्थात् ईश्वर सबके अन्तःकरण के कर्मों को देख रहा है, इससे पापकर्मों का आचरण मनुष्य लोग सर्वथा छोड़ देवें। महर्षि दयानन्द के इस सत्परामर्थ और प्रातः व सायं दोनों समय सन्ध्या करते समय अघमर्षण मन्त्रों के अर्थों पर विचार करते हुए मनुष्य जान लेता है कि वह जैसे पाप व पुण्य कर्म करेगा, ईश्वर की व्यवस्था से उसको उन कर्मों का सुख व दुःख रूपी फल वा दण्ड आदि यथायोग्य अवश्य मिलेगा। इससे वह पाप व अशुभ कर्मों को छोड़ देता है। अतः सन्ध्या के यह तीन मन्त्र एवं इनके अर्थ पर विचार करने से मनुष्य पापों को करना छोड़ देता है। इस पर भी यदि कोई पाप करता रहता है तो उसे बुद्धिहीन व मलिन मन व आत्मा वाला मनुष्य ही कह सकते हैं जो अन्धकार में पड़कर दुःख का भागी होता है। यदि मनुष्य व संसार को पापों से बचाना है तो उसे वेदों की शरण में लाकर वेदों का अध्ययन कराकर अटल कर्म-फल सिद्धान्त को जनाकर अशुभ व पाप कर्मों को करने से छुड़ाना ही होगा। पाप कर्मों को छोड़ने व सन्ध्यादि करने से मनुष्य व जीवात्मा को अनेकानेक लाभ होंगे जिसमें इहलौकिक उन्नति सहित परजन्मों में उन्नति होने के साथ मोक्ष की सिद्धि भी हो सकती है। हम आशा करते हैं पाठक पाप त्याग के लिए इन मन्त्रों का प्रातःसायं पाठ करने के साथ इनके अर्थों पर भी गम्भीरता से विचार करेंगे और वैदिक साहित्य का अध्ययन कर अपने-अपने जीवन को वेदानुकूल बनायेंगे।

 मनुष्य बुरे कर्मों के कठोर दण्ड के भय से ही बुराईयों व पापों से दूर रहता है। देश व समाज में जो लोग अपराध नहीं करते उनका एक कारण यह है कि वह ईश्वर व सरकारी दण्ड व्यवस्था दोनों से डरते हैं। महर्षि दयानन्द ने सन्ध्या में विधान किये अघमर्षण मन्त्रों में भी ईश्वर की सर्वोपरि सत्ता व उसके दण्ड विधान **‘कर्म-फल सिद्धान्त’** का उल्लेख किया है जो अनादि काल से चला आ रहा और अनन्त काल यथापूर्व चलता रहेगा। ज्ञानी व सज्जन पुरूष ईश्वर के दण्ड व मोक्ष विधान को जानकर अपने समस्त जीवन में अपराध, पाप व अशुभ कर्मों से बचे रहते हैं व सुख-शान्ति-समृ़िद्ध का अनुभव व भोग करते हैं। अतः महर्षि दयानन्द द्वारा अघमर्षण मन्त्रों का विधान सर्वथा उपयुक्त व समाज को अपराध मुक्त बनाने की दिशा में एक प्रशंसनीय कार्य है। अन्य मतों में तो संख्या बढ़ाने के लिए पाप क्षमा का विधान किया गया है जो कि सत्य नहीं हो सकता क्योंकि पापों को क्षमा करना एक प्रकार पाप को बढ़ावा देना है जिसे ईश्वर कदापि नहीं करेगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**